इकाई – 2

अध्याय -4

भारत : संरचना, उच्चावच व स्थलाकृतिक प्रदेश
(Bharat : Structure, Relief & Physiographic Regions)

संरचना (Structure)

भारत के उच्चावच तथा स्थलाकृतिक स्वरूपों को समझने से पूर्व यहाँ की भूगर्भिक संरचना का ज्ञान होना आवश्यक है। हमारे देश के विभिन्न भागों की शैलें भिन्न-भिन्न कल्पों और युगों में निर्मित हुई हैं। प्रत्येक देश के उच्चावच और स्थलाकृतिक स्वरूप वहाँ की भूगर्भिक संरचना पर काफी निर्भर करते हैं। यही नहीं, खनिज संसाधन, मृदा संसाधन, प्राकृतिक वनस्पति, भूमिगत जल संसाधन आदि भी भूगर्भिक संरचना पर निर्भर करते हैं। भारत का भूगर्भिक इतिहास आद्य कल्प (Archean Era) से लेकर वर्तमान के नवीन नवजीवी कल्प (Quarternary Era) तक विस्तृत है। अतः इसमें कई क्रमों (Systems) की शैलें पाई जाती हैं। इन्हें मुख्यतः चार वर्गों में बांटा जाता है –

1. आद्य कल्प (Archean Era)

इस कल्प की शैलों को दो प्रमुख उपभागों में विभक्त किया जाता है –

आद्यक्रम की शैलें (Archean System) – इस क्रम की शैलें अत्यन्त प्राचीन व रवेदार शैलें हैं जिनमें जीवावशेषों का अभाव पाया जाता है। इस क्रम की शैलों के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं – (क) बंगाल नाइस, (ख) बुन्देलखण्ड नाइस तथा (ग) नीलगिरि नाइस।

धारवाड़ क्रम की शैलें (Dharwar System) – आद्य क्रम की शैलों के ऊपर धारवाड़ क्रम की शैलें मिलती हैं। कुछ स्थानों में इन दोनों क्रमों की शैलें पास-पास भी पाई जाती हैं। आद्यक्रम की शैलें बनने के बाद उनका कायान्तरण तथा अपरदन होता रहा। अपरदित पदार्थों के निक्षेप से तलछट शैलों की रचना हुई। यही धारवाड़ क्रम की प्राचीनतम तलछट शैलें हैं। दीर्घ भूगर्भिक इतिहास में इनका भी कायान्तरण हुआ है। ये शैलें मुख्यतः (क) मैसूर-धारवाड़-बल्लारी क्षेत्र, (ख) छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र, (ग) राजस्थान में अरावली क्षेत्र, (घ) पंजाब तथा (ण) उपहिमालय के कुछ क्षेत्रों में मिलती हैं। इस क्रम की शैलों में न केवल धात्विक खनिज बल्कि संगमरमर जैसी कायान्तरित शैलें भी पाई जाती हैं।

2. पुराण कल्प (Purana Era)

इस कल्प की शैलों को भी दो उपभागों में बांटा गया है।

कुडप्पा क्रम की शैलें (Cudappah System) – आद्यक्रम तथा धारवाड़ क्रम की शैलों के अपरदित पदार्थों का निक्षिप्त रूप कालान्तर में परतदार शैलों का रूप धारण करता गया। इनका काफी अंश कायान्तरण की लम्बी प्रक्रिया से गुजर चुका है। इनको कुडप्पा क्रम की संज्ञा दी गई है। इनमें स्लेट, क्वार्टज़ाइट तथा चूने के पत्थर के जमाव मिलते हैं। इस क्रम की शैलें अधिकांशतः कृष्णा व पेन्नर नदियों के मध्य स्थित पर्वतीय श्रेणी, कुडप्पा (पापकनी नदी) की घाटी, नल्लामलाई तथा वेनीकोण्डा पर्वतश्रेणियों, गोदावरी घाटी, दिल्ली क्रम तथा कश्मीर के कई क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

विन्ध्ययन क्रम की शैलें (Vindhayayan System) - इस क्रम की अधिकांश शैलें विन्ध्याचल पर्वत के सहारे स्थित हैं। इस क्रम की शैलें कुडप्पा क्रम की शैलों के ऊपर मिलती हैं। इनका विस्तार बिहार के सासाराम एवं रोहतास क्षेत्रों से लेकर अरावली में चित्तौड़गढ़ से होते हुए विन्ध्याचल पर्वतों तक पाया जाता है। इन शैलों में बालुका पत्थर, शेल, क्वार्टज़ाइट व चूना पत्थर मिलते हैं। इसी क्रम में पन्ना, अनन्तपुर एवं गोलकुण्डा के हीरे भी प्राप्त होते हैं। इस क्रम में विभिन्न रंगों के बालुका पत्थर तथा सीमेन्ट बनाने के काम में आने वाला चूना पत्थर मिलता है।

3. द्रविड़ कल्प (Dravid Era)

इस कल्प में गौण्डवाना क्रम की शैलें पाई जाती हैं। इनका विस्तार अधिकांशतः दामोदर घाटी, महानदी घाटी, गोदावरी घाटी, सतपुड़ा श्रेणी, राजमहल पहाड़ी, कच्छ, काठियावाड़, पश्चिमी राजस्थान, कश्मीर, स्पीति आदि में है। इन शैलों का अधिकांश विस्तार

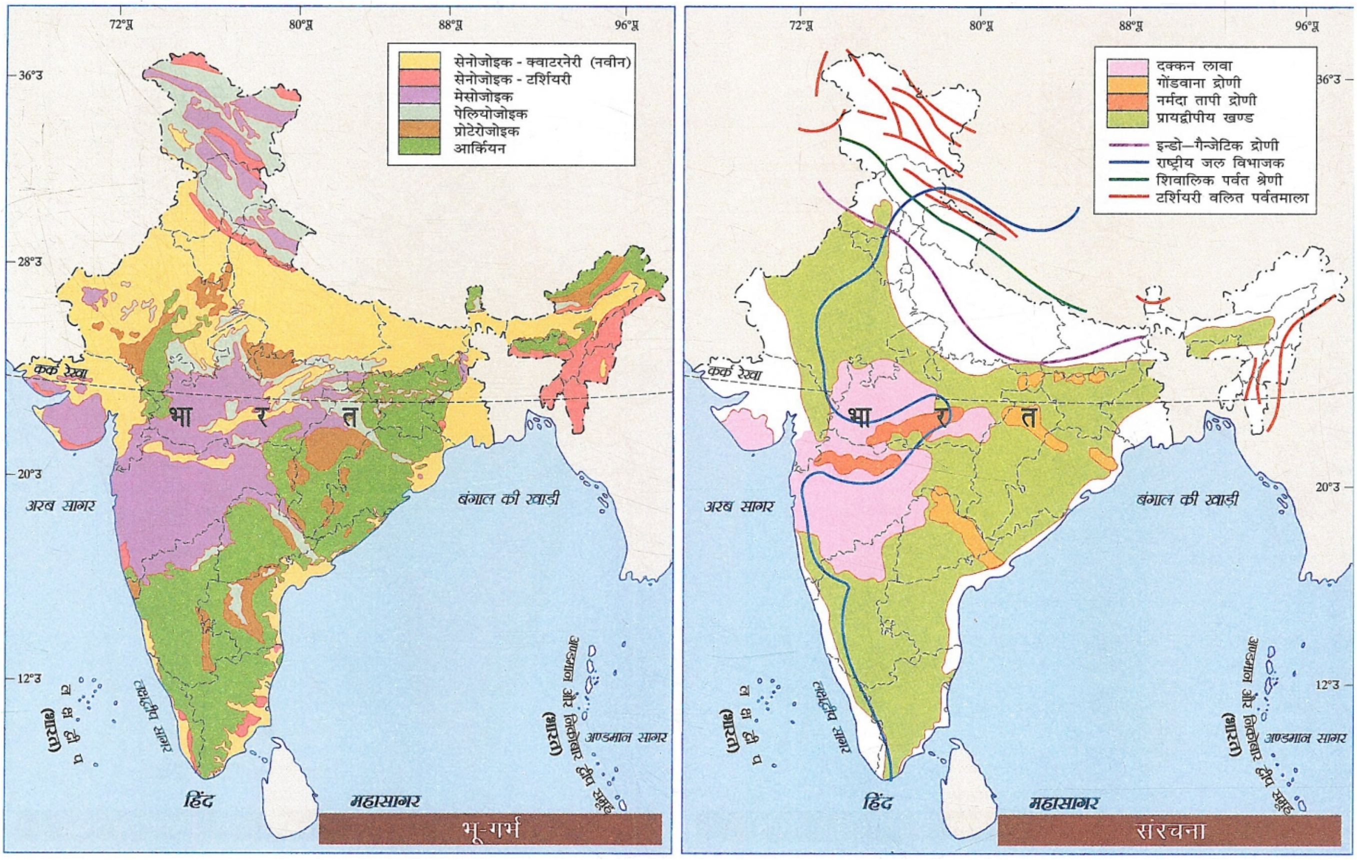

चित्र 4.1 – भारत : भूगर्भिक संरचना

दक्षिणी भारत में है।

4. आर्य कल्प (Aryan Era)

इस कल्प की शैलों का निर्माण कार्बोनिफैरस युग से प्रारम्भ हुआ। अत: इन शैलों का कार्बनिक खनिज अर्थात कोयला, खनिज तेल व प्राकृतिक गैस की दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। इस क्रम की शैलें नवीनतम शैलें हैं।

उच्चावच (Relief)

यहाँ प्राकृतिक स्वरूपों की विविधता पाई जाती है। एक ओर इस विविधता के फलस्वरूप प्राकृतिक नीरसता न होकर सजीवता रहती है, वहीं दूसरी ओर इसके कारण हमारे देश के लोगों, उनकी जीवन शैली, भोजन, वेशभूषा, भाषा, रीति-रिवाज, संसाधनों की उपलब्धि, विकास के स्तर आदि में आकर्षक किन्तु समायोज्य भिन्नताएँ पाई जाती है। उच्चावच की विविधता के कारण ही जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, जीव-जन्तुओं आदि की भी भिन्नताएँ उत्पन्न हुई हैं।

भारत में उच्चावच की विषमता के बावजूद अधिकांश क्षेत्र मानवोपयोगी हैं। हमारे देश की कुल भूमि का लगभग 33.4 प्रतिशत भाग समुद्रतल से 200 मीटर से कम ऊंचा है। देश के कुल क्षेत्रफल के

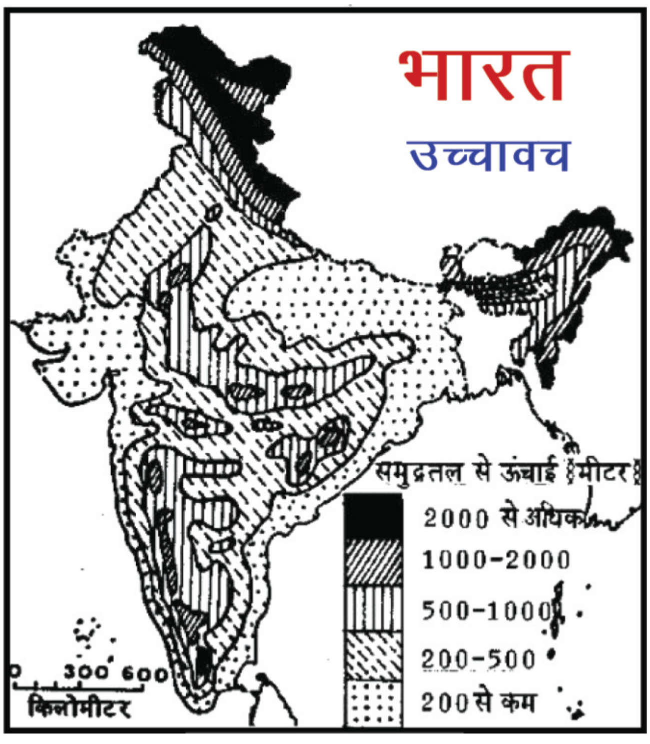

चित्र 4.2 – भारत : उच्चावच

हमारे देश की उत्तरी सीमा पर हिमालय पर्वत पश्चिम से पूर्व की ओर एक वृहत् चाप के रूप में 5 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। यह क्षेत्र लगभग 2400 किलोमीटर लम्बाई में तथा 250 से 400 किलोमीटर की चौड़ाई में विस्तृत है। यह विश्व का सबसे ऊँचा पर्वत है। हिमालय शब्द का अर्थ **हिम का घर** है। औसतन 5000 मीटर से अधिक ऊँचे उठे भाग सदा हिमाच्छादित रहते हैं। वैसे हिमालय के पश्चिमी भाग में हिमरेखा की ऊँचाई 5700 मीटर तथा पूर्वी भाग में 4200 मीटर है। इन नवीन मोड़दार पर्वत श्रेणियों की चौड़ाई पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है, लेकिन ऊँचाई कम होती जाती है। यह पर्वत श्रृंखला कई श्रेणियों से बनी है। इन श्रेणियों के मध्य में पठार तथा घाटियाँ मिलती हैं। इन श्रेणियों का ढाल भारत की ओर तीव्र तथा तिब्बत की ओर धीमा है। हिमालय के पूर्वी भाग उत्तर प्रदेश व पश्चिमी बंगाल के मैदान से एकदम ऊँचे उठे हुए हैं। अत: एवरैस्ट तथा कंचनजंघा चोटियाँ इस मैदान से दृष्टिगोचर होती हैं तथा कम दूरी पर ही स्थित हैं। किन्तु पश्चिमी हिमालय मैदान से धीरे-धीरे ऊपर उठा हुआ हैं, अत: पर्वतीय चोटियाँ काफी दूरी पर स्थित हैं तथा नंगा पर्वत, बद्रीनाथ, नन्दादेवी आदि चोटियाँ मैदान से दिखाई नहीं देती हैं।

हिमालय की उत्पत्ति

नवीन मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति के विषय में कई सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं, किन्तु भूसंनतियों (Geosynclines) से नवीन मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति का मत अधिक मान्य है। यही बात हिमालय की उत्पत्ति पर भी लागू होती है। हॉग (Haug), हॉल (Hall), डाना (Dana), स्टीअर्स (Steers) आदि विद्वानों ने लम्बे, संकड़े, छिछले व कमजोर तली वाले सागरीय भागों को भूसंनति कहा है। करोड़ों वर्ष पूर्व विश्व के सभी महाद्वीप एक बड़े स्थलखण्ड के रूप में थे, जिसे **पैन्जिया** नाम दिया गया है। इसका उत्तरी भाग **लॉरेशिया** तथा दक्षिणी भाग **गोंडवानालैण्ड** के नाम से जाना जाता है। यूरेशिया वाले भाग को **अंगारालैण्ड** कहा जाता है। आज जहाँ हिमालय है वहाँ अंगारालैण्ड व गौंडवानालैण्ड के मध्य **टिथिस सागर (Tethys Sea)** नामक विशाल भूसंनति थी। इसमें दोनों ओर से बहकर आने वाली नदियों द्वारा तलछट जमा होती रही। यद्यपि भूसंनति छिछली होती है, किन्तु निक्षिप्त तलछट के दबाव से इसकी तली धंसती रहती है तथा तलछट जमा होती रहती है। इस प्रकार टिथिस सागर में हजारों फीट की गहराई तक तलछट जमा होती रही। तत्पश्चात विभिन्न कारणों से इस तलछट पर दबाव पड़ने से इसमें वलन या मोड़ पड़े, जिसके परिणामस्वरूप हिमालय की उत्पत्ति हुई। दबाव पड़ने की दिशा व कारणों के बारे में काफी मत भिन्नताएँ हैं।

कोबर (Kober) का मानना है कि भूसंनति में निक्षिप्त तलछट पर दोनों ओर से दबाव पड़ने के कारण मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति होती है। दबाव डालने वाले दोनों ओर के इन प्रदेशों को उन्होंने **अग्र प्रदेश (Foreland)** कहा। अग्र प्रदेशों के दबाव के कारण इनके तटीय क्षेत्रों में वलन पड़ते हैं, तथा मध्यवर्ती भाग साधारणत: इस वलन-प्रक्रिया से अछूता रहने के कारण समतल उच्च भूमि के रूप में रह जाता है, जिसे कोबर **मध्य पिण्ड (Median Mass)** कहते हैं। उनके अनुसार हिमालय के संदर्भ में अंगारालैण्ड व गोण्डवानालैण्ड दोनों ही अग्र प्रदेश हैं तथा तिब्बत का पठार एक मध्य पिण्ड है, जैसा कि चित्र संख्या 4.5 में दर्शाया गया है। यद्यपि दोनों ओर से दबाव पड़ने की प्रक्रिया को डेली (Daly) व होम्स (Holmes) ने भी स्वीकार किया है, किन्तु इसके लिये उन्होंने भिन्न-भिन्न कारण बताये हैं। डेली ने मोड़दार पर्वतों के निर्माण के लिये दोनों ओर से महाद्वीपीय स्खलन (Continental Sliding) को उत्तरदायी बताया है। होम्स ने दो अग्र प्रदेशों के बीच भूसंनति बनने, उसके निरन्तर गहरा होने तथा उसमें जमा हुई तलछट पर दोनों ओर से महाद्वीपीय दबाव पड़ने के लिये पृथ्वी के अन्दर उत्पन्न होने वाली संवाहनिक तरंगों (Convectional currents) को उत्तरदायी माना है।

कुछ विद्वानों का मत इससे भिन्न है। वे महाद्वीपीय दबाव एक ही दिशा से मानते हैं। इन विद्वानों ने दबाव डालने वाले या धक्का देने वाले महाद्वीपीय पिण्ड को **पृष्ठ प्रदेश (Hinterland)** तथा स्थिर भूभाग अर्थात् प्रतिरोधक महाद्वीपीय पिण्ड को **अग्र प्रदेश (Foreland)** कहा, जैसा कि चित्र संख्या 4.5 में दर्शाया गया है। किन्तु इन विद्वानों में भी वलन के लिये उत्तरदायी धक्का आने की दिशा के बारे में मत भिन्नता है। कुछ विद्वान धक्का आने की दिशा उत्तर से (अंगारालैण्ड की ओर से) मानते हैं, जबकि कुछ अन्य विद्वान अंगारालैण्ड को स्थिर मानते हुए दक्षिण की ओर से (गोण्डवानालैण्ड से) दबाव पड़ने में विश्वास रखते हैं। स्वैस (Suess) सिद्धान्तत: मानते हैं कि पर्वतीय वलन के लिये एक ही दिशा से दबाव पर्याप्त है, जिसे पृष्ठ प्रदेश कहा गया है, तथा दूसरी ओर महाद्वीपीय पिण्ड (अग्र प्रदेश) इस दबाव का प्रतिरोध करता है। आरगण्ड (Argand) व वैगनर (Wegner) की मान्यता है कि गोण्डवानालैण्ड का कुछ भाग टिथिस सागर की ओर प्रवाहित हुआ तथा अंगारालैण्ड स्थिर रहा (चित्र संख्या 4.4)। ऑस्ट्रेलियाई भूगर्भशास्त्रियों पॉवेल व कॉनैघन (Powell & Conaghan) ने भी बताया कि टिथिस सागर की ओर खिसकते भारतीय उपमहाद्वीप तथा तिब्बतीय भूखण्ड के प्रतिरोध के फलस्वरूप हिमालय बना। जब कि वाडिया (Wadia) की मान्यता है कि हिमालय की उत्पत्ति उत्तर से आने वाले धक्कों के सम्मुख भारतीय प्रायद्वीप द्वारा प्रस्तुत प्रतिरोध (Resistance) के कारण हुई है।

हिमालय का भौगोलिक वर्गीकरण

हिमालय कई पर्वत श्रेणियों से मिलकर बना है। इसे भौगोलिक दृष्टि से तीन मुख्य भागों में बांटा जाता है (चित्र 4.7)-

1. महा हिमालय (Greater Himalayas) - यह सबसे उत्तरी पर्वतमाला है, जिसे **मुख्य हिमालय** (Main Himalayas), **हिमाद्री** (Himadri), **आन्तरिक हिमालय** (Inner Himalayas), **बर्फीले**

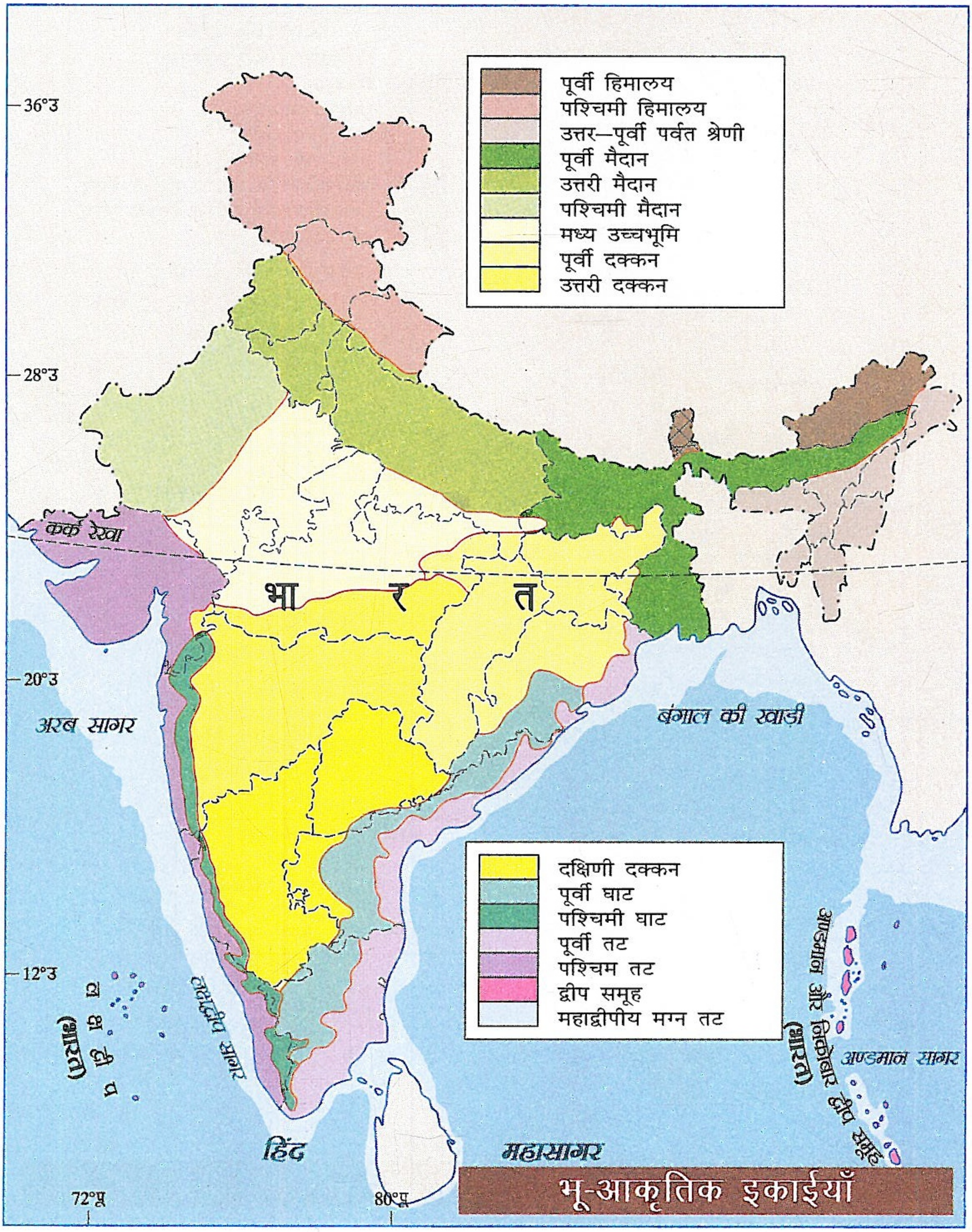

चित्र 4.3 – भारत : स्थलाकृतिक प्रदेश

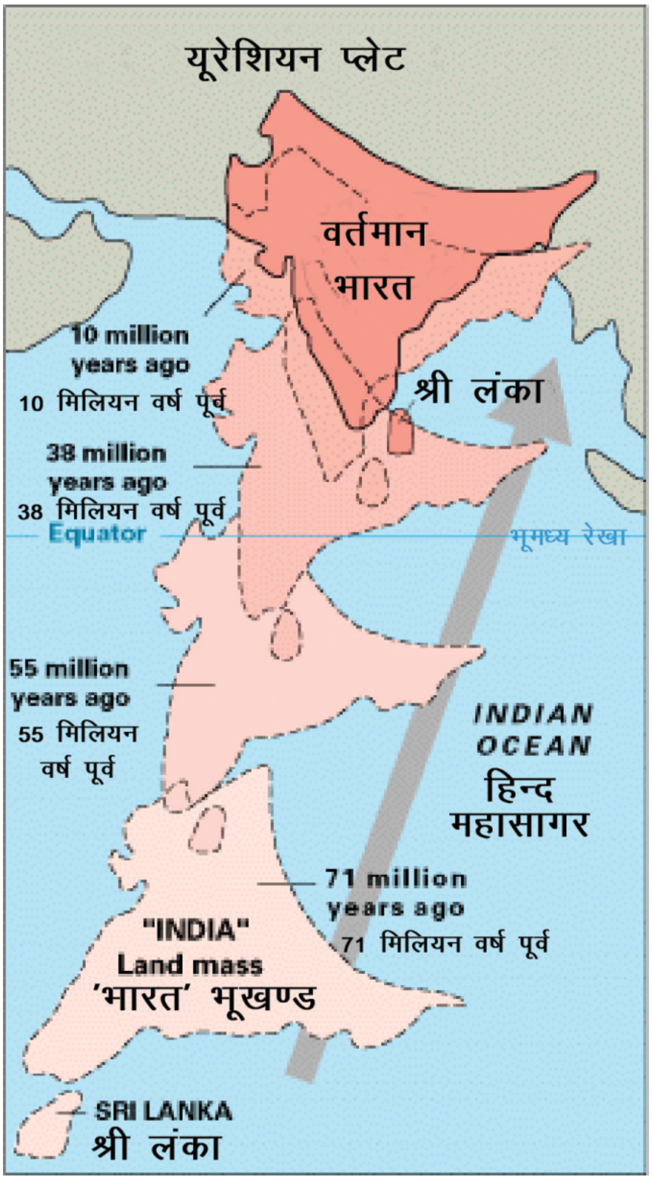

चित्र 4.4 – गोण्डवानालैण्ड (भारत) का उत्तर दिशा की ओर प्रवाह

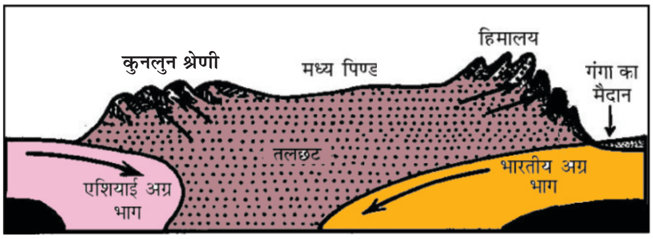

चित्र 4.5 – कोबर के अनुसार हिमालय की उत्पत्ति

हिमालय (Snowy Himalayas) आदि नामों से भी जाना जाता है। यह श्रेणी उत्तर-पश्चिम में सिन्धु नदी के मोड़ से लेकर पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी के मोड़ तक लगभग 2500 किलोमीटर लम्बाई में फैली हुई है। **चाप की आकृति** में फैली हुई यह **सर्वोच्च श्रेणी** लगभग 73° पूर्व से 97° पूर्व देशान्तर तक विस्तृत है। इसकी औसत ऊँचाई लगभग 6000 मीटर तथा चौड़ाई 100 से 200 किलोमीटर तक है। यहाँ 40 पर्वतीय चोटियाँ 7000 मीटर से भी अधिक ऊँची हैं। देश की सबसे ऊँची चोटियाँ इसी पर्वत श्रेणी में हैं। माउण्ट एवरैस्ट (8848मीटर), गॉडविन ऑस्टिन (8611 मीटर), कंचनजंघा (8585 मीटर), मकालू (8481 मीटर), धौलागिरि (8172 मीटर), नंगा पर्वत (8126मीटर), अन्नपूर्णा (8078मीटर), नन्दा देवी (7818मीटर) आदि हिमाच्छादित चोटियाँ इसी श्रेणी में स्थित हैं। यह श्रेणी विवर्तनिक दृष्टि से सक्रिय है, अतः अभी भी ऊँची उठ रही है। भारत की ओर इस श्रेणी का ढाल तीव्र होने के कारण नदियों की घाटियाँ संकीर्ण एवं खड़े ढालों वाली हैं। सिन्धु, सतलज, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ यहाँ से निकलती हैं। यद्यपि ऊबड़-खाबड़ व तीव्र ढाल के कारण यह श्रेणी आवागमन में बाधक है, किन्तु जोजीला, कराकोरम, शिपकी, मानानीति आदि दर्रे इसमें आवागमन की सुविधा प्रदान करते हैं।

महा हिमालय की दक्षिणी पूर्वी शाखा भारत की पूर्वी सीमा पर होती हुई म्यानमार (बर्मा) तक चली गई है। गारो, खासी, जयन्तिया, पटकोई, नागा, बुम व लुशाई आदि पहाड़ियाँ इसी का भाग हैं। ये सभी पहाड़ियाँ बहुत ही दुर्गम हैं तथा घने वनों से ढकी हैं। ये भारत की पूर्वी भौगोलिक सीमा बनाती हैं।

महा हिमालय की उत्तरी-पश्चिमी शाखा पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान की सीमा पर फैली है। सुलेमान, किरथर, हिन्दुकुश व कराकोरम आदि इसकी प्रमुख श्रेणियाँ हैं। इनमें खैबर, गोमल, टोची, बोलन आदि दर्रे हैं, जिनका उपयोग स्थलीय मार्गों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये होता है।

2. लघु हिमालय (Lesser Himalayas) - यह पर्वत श्रृंखला महा हिमालय के दक्षिण में स्थित है। इसे **मध्य हिमालय (Middle Himalayas)** या **हिमाचल हिमालय (Himachal Himalayas)** के नाम से भी जाना जाता है। यह श्रेणी महा हिमालय के दक्षिण में उसके समानान्तर फैली हुई है। इसकी चौड़ाई 80 से 100 किलोमीटर तक है। इसकी औसत ऊँचाई 3000 मीटर है, किन्तु अधिकतम ऊँचाई 5000 मीटर तक पाई जाती है। इसमें कई छोटी-छोटी श्रेणियाँ हैं, जिनमें धौलाधर, पीर पंजाल, नाग टीबा, महाभारत, मसूरी आदि मुख्य हैं। यहाँ शीत ऋतु में 3-4 महीने तक बर्फ गिरती है, किन्तु ग्रीष्म ऋतु सुहावनी व स्वास्थ्यवर्द्धक रहती है। अतः इस श्रेणी के निचले भागों में कई पर्वतीय पर्यटक स्थान जैसे शिमला, मसूरी, नैनीताल, दार्जिलिंग, रानीखेत आदि स्थित हैं। इस श्रेणी के उच्च ढालों पर कोणधारी वन तथा निम्न ढालों पर घास के क्षेत्र पाये जाते हैं, जिन्हें **कश्मीर में मर्ग** (जैसे गुलमर्ग, सोनमर्ग आदि) तथा उत्तरांचल में **बुग्याल** व **पयार** कहते हैं। लघु हिमालय विवर्तनिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक सन्तुलित व स्थिर हो गया है। यहाँ **नदियों के हड़पने (River Capture)** के कई उदाहरण मिलते हैं।

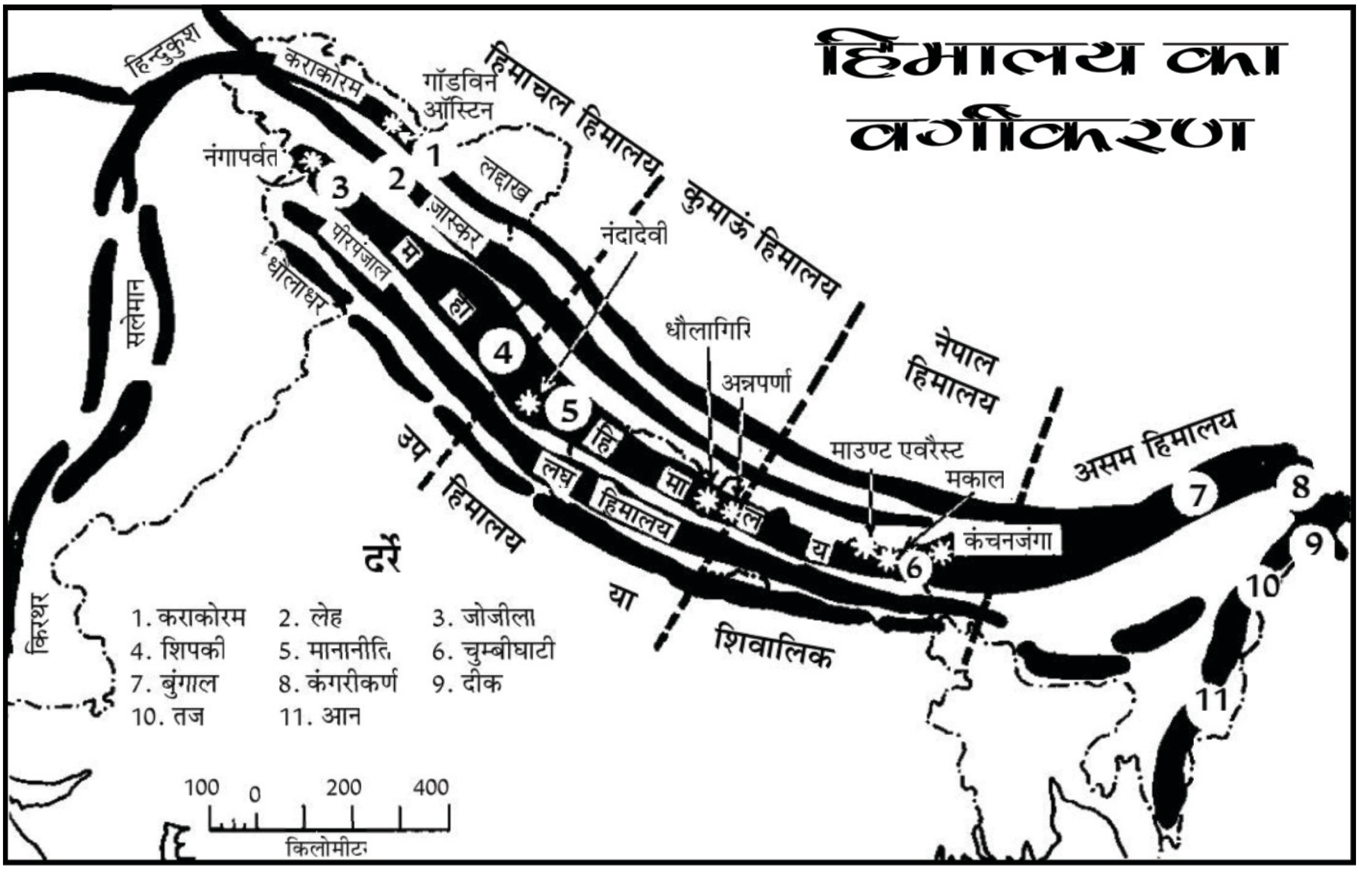

चित्र 4.7 – हिमालय का वर्गीकरण

3. उप-हिमालय (Sub-Himalayas) – हिमालय की यह सबसे दक्षिणी श्रेणी है। इसे **बाह्य हिमालय (Outer Himalayas)** या **शिवालिक श्रेणी** के नाम से जाना जाता है। हिमालय की सभी श्रेणियों में यह नवीनतम रचना है। यह श्रेणी पोटवार बेसिन से प्रारम्भ होकर पूर्व की ओर कोसी नदी तक विस्तृत है। यह श्रेणी 10 से 50 किलोमीटर चौड़ी है तथा इसकी औसत ऊँचाई 1000 मीटर है। इस श्रेणी को विभिन्न भागों में विभिन्न नाम दिये गये हैं, जैसे गोरखपुर के निकट **डूंडवा** तथा पूर्व की ओर **चूरियाँ** व **मूरियाँ**। शिवालिक श्रेणी से नदियाँ संकीण घाटियाँ या गॉर्ज बनाती हुई मैदान में प्रवेश करती हैं, जहाँ अनेक जलोढ़ पंख मिलते हैं। इन्हें स्थानीय रूप से **भाबर** नाम से जाना जाता है। भाबर का दक्षिणी भाग दलदली है, जो **तराई** कहलाता है। यह सम्पूर्ण भाग वनाच्छादित है। मध्यवर्ती भाग में हिमालय व शिवालिक के बीच नदियों की मिट्टी व बालू से निर्मित कुछ ऊँचे घाटी-मैदान भी मिलते हैं, जिन्हें पूर्व में **द्वार** (जैसे हरिद्वार) तथा पश्चिम में **दून** (जैसे देहरादून) कहते हैं।

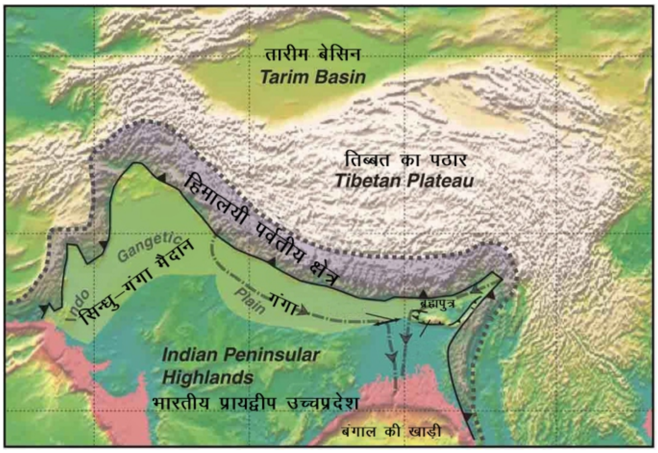

चित्र 4.6 – हिमालय, सिन्धु, गंगा व ब्रह्मपुत्र मैदान

हिमालय का प्रादेशिक वर्गीकरण

प्रादेशिक आधार पर हिमालय पर्वतीय क्षेत्र को निम्न चार भागों में विभाजित किया जाता है (चित्र संख्या 4.7) –

1. हिमाचल हिमालय – इसका विस्तार सिन्धु नदी से सतलज नदी तक है। यह भाग 570 किलोमीटर की लम्बाई में विस्तृत है। इसका अधिकांश भाग जम्मू-कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश में विस्तृत है। इस भाग की मुख्य पर्वत श्रेणियाँ पीर पंजाल, धौलाधर, जास्कर तथा लद्दाख हैं। इनके उत्तरी ढाल ऊबड़-खाबड़, निर्जन व शुष्क हैं तथा दक्षिणी

ढाल वनाच्छादित हैं। काँगड़ा, लाहुल व स्पीति घाटियाँ यहीं स्थित हैं, जिनमें फलों की कृषि की जाती है।

2. कुमाऊँ हिमालय – यह भाग लगभग 320 किलोमीटर लम्बाई में फैला है। हिमालय का यह भाग सतलज नदी से काली नदी तक विस्तृत है। यह हिमाचल हिमालय से अधिक ऊँचा है। इसमें बद्रीनाथ (7040 मीटर), केदारनाथ (6831 मीटर), त्रिशूल (6707 मीटर), गंगोत्री (6508मीटर) आदि प्रमुख चोटियाँ हैं। गंगा, यमुना आदि नदियों के उद्‌गम स्थान इसी क्षेत्र में हैं। बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, जमुनोत्री आदि प्रमुख तीर्थ स्थान भी इसी क्षेत्र में स्थित हैं।

3. नेपाल हिमालय – यह भाग लगभग 800 किलोमीटर लम्बाई में फैला है। हिमालय का यह भाग काली नदी से तीस्ता नदी तक विस्तृत है। इसका अधिकांश भाग नेपाल में विस्तृत होने से **नेपाल हिमालय** तथा अन्यत्र सिक्किम में इसे **सिक्किम हिमालय**, पश्चिमी बंगाल में इसे **दार्जिलिंग हिमालय** तथा भूटान में इसे **भूटान हिमालय** कहा जाता है। हिमालय का यह सर्वोच्च भाग है, जहाँ एवरैस्ट, कंचनजंघा, मकालू, धौलागिरि, अन्नपूर्णा आदि ऊँची व हिमाच्छादित चोटियाँ हैं।

4. असम हिमालय – यह भाग तीस्ता नदी से ब्रह्मपुत्र नदी तक फैला है। लगभग 740 किलोमीटर लम्बे इस भाग को असम हिमालय कहते हैं। काबरू, चुमलहारी, जांग सांगला, कुला कांगड़ी, पौहुनी आदि इस क्षेत्र की प्रमुख चोटियाँ हैं। इसी क्षेत्र में नागा पहाड़ियाँ भारत व म्यांमार (बर्मा) के बीच जल-विभाजक का कार्य करती हैं। यह घना वनाच्छादित क्षेत्र है जिसमें कई जनजातियाँ निवास करती हैं।

हिमालय का महत्व

महाकवि कालिदास ने हिमालय को पर्वतों का राजा एवं देवताओं का निवास स्थान बताया है। हिमालय पर्वत की भौतिक रचना, स्थिति, विस्तार, संरचना आदि देश के लिए बड़ी ही महत्वपूर्ण और उपयोगी है, क्योंकि –

1. ये देश के उत्तर व पूर्व में प्राकृतिक सीमा बनाते हैं।
2. उत्तर में प्रहरी के रूप में इनकी अवस्थिति के कारण देश को पारम्परिक रूप से बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित माना जाता रहा है। वैसे आधुनिक तकनीकी उपलब्धियों के कारण अब ये उतने अभेद्य नहीं रहे हैं। अत: अब हमें अपनी उत्तरी व पूर्वी सीमाओं की सुरक्षा के प्रति भी पहले की अपेक्षा अधिक सजग रहना पड़ता है।
3. यह उच्च पर्वतीय दीवार उत्तर की ओर से आने वाली ठण्डी ध्रुवीय हवाओं से भारत की रक्षा करती हैं।
4. उत्तर से आने वाली ठण्डी ध्रुवीय हवाओं के रूक जाने के कारण ही भारत की मौसमी परिस्थितियों में स्थिरता रहती है।
5. ये दक्षिण से आने वाली मानसूनी हवाओं को हिमालय से परे उत्तर की ओर जाने से रोकते हैं। इससे इन आर्द्र पवनों का लाभ भारत को मिलता है।
6. हिम का पिघला हुआ जल प्राप्त होते रहने के कारण यहाँ से नित्यवाही नदियाँ निकलती हैं, जिनसे गंगा-सिन्धु के विस्तृत मैदानों में सिंचाई की जाती है।
7. इनमें पाये जाने वाले जल प्रपात जल-विद्युत के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।
8. इनसे निकली नदियों द्वारा बहाकर लाई गई बारीक कांप मिट्टी के जमा कर देने से गंगा-सतलज के विशाल, समतल व उपजाऊ मैदान बने हैं, जो भारत के लिये आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। यही नहीं, ये नदियाँ प्रतिवर्ष मिट्टी की नई परत बिछाकर इन मैदानों के उपजाऊपन का प्राकृतिक रूप से नवीनीकरण करती रहती हैं।
9. यहाँ विभिन्न ऊँचाइयों पर जलवायु सम्बन्धी भिन्नताओं के कारण विभिन्न प्रकार के वन, वनस्पतियाँ, लकड़ी, कन्दमूल-फल, गौंद, लाख, औषधियाँ व जड़ी-बूंटियाँ इत्यादि मिलती हैं।
10. वनों से प्राप्त कच्चे पदार्थों पर देश के कई उद्योग-धन्धे आधारित हैं।
11. विशाल वन सम्पदा के कारण यहाँ विभिन्न प्रकार के वन्य जीव जैसे शेर, चीते, हाथी, सांभर, हिरन, भालू, तेन्दुए, बन्दर आदि मिलते हैं।
12. पहाड़ी ढालों पर केसर, चाय, आलू, फलों आदि की कृषि होती है तथा पशुचारण होता है।
13. हिमालय की विशिष्ट संरचना के कारण यहाँ विभिन्न प्रकार के खनिज भण्डार उपलब्ध हैं। यहाँ तेलीय शैल के कारण खनिज तेल पाये जाने की सम्भावनाएं भी हैं।
14. अनेक प्राकृतिक झीलों, स्वास्थ्यवर्द्धक एवं मनोरम स्थानों के कारण इसका पर्यटक महत्त्व है। शिमला, मसूरी, नैनीताल, भीमताल, गरूड़ताल, रानीखेत, अल्मोड़ा, कसौली, चम्बा, कुल्लू, मुक्तेश्वर, अमरनाथ, भुवाली, कालिमपौंग, शेषनाग, पहलगांव, गुलमर्ग, सोनमर्ग आदि स्थानों को बड़ी संख्या में स्वदेशी व विदेशी पर्यटक जाते हैं।
15. उपर्युक्त भौतिक महत्ता के अतिरिक्त हिमालय का पौराणिक दृष्टि से आध्यात्मिक महत्व भी है। यहाँ देवताओं का वास माना गया है। बद्रीनाथ, केदारनाथ, अमरनाथ, कैलाश, मानसरोवर, विष्णुप्रयाग, देवप्रयाग, कर्णप्रयाग, हरिद्वार, उत्तरकाशी, जोशीमठ, गंगोत्री, यमनोत्री आदि अनेक प्रमुख तीर्थस्थल यहाँ स्थित हैं। स्वयंभूनाथ, तबांग, हैमिस, ध्यागबोचे आदि प्रसिद्ध बौद्ध मठ भी यहाँ हैं।
16. हिमालय पर्वतारोहण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।
17. यहाँ के गठीले शरीर वाले साहसी युवक भारतीय सेना में योगदान करते हैं।

2. विशाल मैदान (Great Plains)

यह मैदान हिमालय पर्वत तथा प्रायद्वीपीय पठार के मध्य स्थित

है। भारत के विभाजन से पूर्व इसे गंगा सिन्धु मैदान के नाम से जाना जाता था, किन्तु विभाजन के कारण सिन्धु व उसकी सहायक नदियों झेलम, चिनाव व रावी के मैदान पाकिस्तान में चले गये हैं। अत: अब भारतीय क्षेत्र को सतलज-गंगा-ब्रह्मपुत्र का मैदान कहते हैं, जो इनके व इनकी सहायक नदियों द्वारा बिछाई गई तलछट मिट्टी से बना है। इस धनुषाकार मैदान की लम्बाई लगभग 2400 किलोमीटर व चौड़ाई 150 से 480 किलोमीटर तक है। यह धीमे ढाल वाला अत्यन्त समतल मैदान है। वाराणसी से गंगा के डेल्टा तक इसका ढाल केवल 10 से.मी. प्रति किलोमीटर है। इसमें अरावली पर्वत जल विभाजक का कार्य करते हैं। अरावली को छोड़कर इसकी अधिकतम ऊँचाई 185 मीटर है। इसमें तलछट के जमाव की गहराई के बारे में मतभेद हैं, किन्तु कई स्थानों पर इसकी परत 3000 मीटर से भी अधिक मोटी है। यह विश्व के सबसे अधिक विस्तृत, उपजाऊ व घने आबाद मैदानों में से एक है (चित्र 4.6)।

भौगोलिक वर्गीकरण

यद्यपि समतलता के कारण इसे **उच्चावच रहित मैदान (Featureless Plain)** कहा जाता है, तथापि भौगोलिक दृष्टि से इसे चार वर्गों में विभाजित किया जाता है –

1. भाबर प्रदेश – शिवालिक के पर्वतपदीय क्षेत्र में सतलज नदी से तीस्ता नदी तक 8से 16किलोमीटर चौड़ी पट्टी में इसका विस्तार है। पर्वतीय कक्ष से निकलकर मैदानी कक्ष में प्रवेश करते ही (ढाल के स्वरूप में परिवर्तन के कारण) नदियाँ भारी चट्टान चूर्ण गिरिपद क्षेत्र में जमा कर देती हैं। इस क्षेत्र में अधिकांश नदियों का भूमिगत प्रवाह होता है। कृषि की दृष्टि से अनुपयोगी इस क्षेत्र में लम्बी जड़ों वाले वृक्ष पाये जाते हैं।

2. तराई प्रदेश – यह भाबर के दक्षिण में मैदान का वह भाग है, जहाँ भाबर प्रदेश का भूमिगत जल प्रवाह फिर धरातल पर प्रकट हो जाता है। अनियमित जल प्रवाह के कारण यहाँ दलदल पाये जाते हैं। इस प्रदेश में सघन वन, लम्बी घासें (जैसे – कांस, हाथी घास आदि) व वन्य जीव मिलते हैं। पश्चिमी भाग में वर्षा की कमी के कारण तराई का अभाव है। उत्तर प्रदेश में इस भाग को साफ करके तथा जल प्रवाह को नियन्त्रित करके विभिन्न फसलों व जूट आदि की कृषि के सफल प्रयास किये गये हैं।

3. बांगर प्रदेश – ये प्राचीन तलछल से निर्मित वे उच्च मैदान बांगर कहलाते हैं जहाँ नदियों के बाढ़ का जल नहीं पहुँच पाता है। ये उत्तर प्रदेश के उत्तर-पश्चिमी भाग तथा उत्तरांचल में अधिक पाये जाते हैं।

4. खादर प्रदेश – ये नई तलछट व कांप मिट्टी से बने हुए निचले मैदान हैं। यहाँ बाढ़ का पानी प्रति वर्ष पहुँच कर मिट्टी की नई परत जमाता रहता है। ऐसे निचले मैदानों को खादर कहते हैं। ये पूर्वी उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, बिहार व पश्चिमी बंगाल में अधिक हैं।

प्रादेशिक वर्गीकरण

सतलज नदी से पूर्व की ओर ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी तक फैले इस विस्तृत मैदान को प्रादेशिक आधार पर चार मुख्य भागों में बांटा जाता है –

1. पंजाब-हरियाणा का मैदान – विशाल मैदान का यह भाग पंजाब व हरियाणा राज्यों में विस्तृत है। इस मैदान का उत्तर-पश्चिमी भाग सिन्धु एवं उसकी सहायक नदियों – सतलज, व्यास, रावी, चिनाव, झेलम द्वारा जमा की गई कांप मिट्टी के जमाव से बना है। दो नदियों के मध्य स्थित मैदानी क्षेत्र को स्थानीय भाषा में **दोआब** कहा जाता है। व्यास व सतलज के बीच **बिस्त दोआब**, रावी व व्यास के बीच **बारी दोआब**, चिनाब व रावी के बीच **रेचना दोआब**, झेलम व चिनाब के बीच **चाज दोआब** एवं सिन्धु व झेलम के बीच **सिन्धु सागर दोआब** है। इनमें से केवल **बिस्त-बारी दोआब** ही भारत में है, शेष भाग विभाजन के फलस्वरूप पाकिस्तान में चला गया है। नदियों के दोनों ओर 10 से 20 किलोमीटर चौड़ा क्षेत्र खादर या बाढ़ग्रस्त है। ऐसे क्षेत्रों को स्थानीय भाषा में **बेट** (Bet) कहते हैं। शिवालिक पहाड़ियों के साथ लगते मैदानी भागों में छोटी-छोटी नदियों द्वारा अपरदन के कारण कई खड्ड बन गये हैं, जिन्हें स्थानीय भाषा में **चो** (Cho) कहते हैं। ऐसे **चो** होशियारपुर जिले में अधिक मिलते हैं। इससे दक्षिण-पूर्व में घग्घर नदी तक फैले मैदान को हरियाणा का मैदान कहते हैं। सिंचाई की सुविधा में वृद्धि के साथ हरियाणा मैदान का कृषि उपयोग तेजी से बढ़ा है।

2. गंगा का मैदान – यह एक विशाल, समतल एवं अत्यन्त उपजाऊ मैदान है जो गंगा व उसकी सहायक नदियों यमुना, गोमती, घाघरा, गण्डक, कोसी, बेतवा, केन, चम्बल, सोन आदि द्वारा जमा की गई उपजाऊ कांप मिट्टी से बना है। इसका विस्तार अरावली श्रेणियों के पूर्व से प्रारम्भ होकर पश्चिमी बंगाल तक है, अर्थात यह पूर्वी राजस्थान, उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, बिहार व पश्चिमी बंगाल में फैला है। इस मैदान का सामान्य ढाल पूर्व तथा दक्षिण-पूर्व की ओर है। इस मैदान में खादर व बांगर भूमि मिलती है। बांगर प्रदेश अर्थात उच्च मैदानों के कुछ शुष्क भागों में छोटे-छोटे टीले मिलते हैं, जिन्हें स्थानीय भाषा में **भूड़ (Bhoor)** कहते हैं। उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में इसे **गंगा-यमुना दोआब**, उत्तर-मध्य भाग में **रूहेलखण्ड का मैदान** (Ruhelkhand) तथा उत्तरी-पूर्वी भाग को **अवध का मैदान** कहा जाता है। बिहार में गंगा नदी के दोनों ओर इसे क्रमश: **झारखण्ड का मैदान** व **बिहार का मैदान** कहते हैं। झारखण्ड के मैदान में घाघरा, गण्डक, कोसी आदि नदियाँ बहती हैं। इसका ढाल दक्षिण-पूर्व की ओर है। बिहार के मैदान

में छोटा नागपुर के पठार से निकलकर सोन व अन्य नदियाँ उत्तर व उत्तर-पूर्व की ओर प्रवाहित होकर गंगा नदी में मिलती हैं। पश्चिमी बंगाल में हिमालय पदीय क्षेत्र से गंगा के डेल्टा तक उत्तरी बंगाल का मैदान (North Bengal Plain) विस्तृत है। इसमें गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियाँ प्रवाहित होती हैं। यहाँ पर्वतपदीय क्षेत्र को **दुआर (Duar)** कहते हैं जहाँ चाय के बहुत सारे बागान है।

3. ब्रह्मपुत्र का मैदान - असम राज्य में हिमालय व गारो पहाड़ियों के मध्य फैला यह एक संकड़ा एवं लम्बा मैदान है जो ब्रह्मपुत्र द्वारा जमा की गई कांप मिट्टी से बना है। धुबरी (Dhubri) से सदिया (Sadiya) तक फैला यह मैदान लगभग 650 किलोमीटर लम्बा एवं 100 मिलोमीटर चौड़ा है। ब्रह्मपुत्र नदी के जल में मिट्टी की अधिकता के कारण बहाव में थोड़ी सी रूकावट आने से ढेरों मिट्टी एकत्रित हो जाती है। इसी कारण ब्रह्मपुत्र नदी में द्वीप बहुत हैं।

4. गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा - यह अत्यन्त समतल क्षेत्र है तथा समुद्रतल से बहुत कम ऊँचा है। इस क्षेत्र में ज्वार का जल फैल जाता है, अत: यह भाग दलदली रहता है। ज्वारीय जल की डूब में न आने वाली उच्च भूमि पर, जिसे **चर (Char)** कहते हैं, बस्तियाँ हैं। निम्न भूमि को **बिल (Bill)** कहते हैं जिनमें जूट धोने के लिये पर्याप्त जल मिल जाता है।

विशाल मैदान का महत्व

1. यह मैदान कांप मिट्टी से बना है अत: यह अत्यन्त उपजाऊ है।
2. प्रति वर्ष बाढ़ द्वारा मिट्टी की नई परत बिछ जाने से मिट्टी की उर्वरता का प्राकृतिक रूप से नवीनीकरण होता रहता है।
3. इस मैदान में नदियों का जाल-सा बिछा है। इनके पानी का उपयोग सिंचाई, जल परिवहन, जल-विद्युत उत्पादन तथा उद्योगों में किया जाता है।
4. समतल मैदान होने के कारण नहरों के निर्माण एवं कुओं की खुदाई पर अधिक व्यय नहीं होता है। अत: सिंचाई के साधन सस्ते व सुलभ हैं।
5. यह मैदान पूर्वी भाग में गन्ना, चाय व चावल तथा पश्चिमी भाग में गेहूँ, कपास आदि का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है।
6. यहाँ देश की लगभग 45 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।
7. समतल होने के कारण यहाँ सभी प्रकार के आवागमन के साधनों का सघन जाल है।
8. भारत के अधिकांश बड़े-नगर, व्यापारिक व औद्योगिक केन्द्र इसी मैदान में स्थित हैं।
9. इस मैदान में प्रचुर जीवनोपयोगी सुविधाएं उपलब्ध हैं।
10. यहाँ व्यापार की सुविधाएँ सुलभ हैं।
11. विभिन्न सुविधाओं के कारण इस क्षेत्र में औद्योगिक प्रगति को प्रोत्साहन मिला है।
12. यहाँ कई दर्शनीय स्थल हैं।

3. थार का मरूस्थल (Thar Desert)

थार का मरूस्थल पश्चिमी राजस्थान में विस्तृत है। कुछ भूगोलवेत्ता इसे प्रायद्वीपीय भारत के अध्ययन में सम्मिलित करते हैं, क्योंकि इस क्षेत्र की आधारभूत चट्टानें दक्षिण के पठार का ही विस्तार हैं। अन्य भूगोलवेत्ता विशाल मैदान के साथ इसकी निरन्तरता के कारण इसे गंगा-सतलज के मैदान के अंग के रूप में अध्ययन करते हैं। भौतिक दृष्टि से इस क्षेत्र की अपनी विशिष्टता व समस्याएं हैं, अत: यहाँ इसे एक अलग प्रदेश के रूप में सम्मिलित किया गया है।

थार के मरूस्थल की उत्पत्ति

थार के मरूस्थल की उत्पत्ति के सम्बन्ध में मत भिन्नताएँ हैं। कुछ विद्वान यहाँ बालू की उपस्थिति स्थानीय चट्टानों के विघटन से मानते हैं। किन्तु धरातलीय चट्टानों के प्राथमिक अपरदन के लक्षण जलीय प्रभाव का प्रदर्शन करते हैं। अत: कुछ विद्वानों का मत है कि इस क्षेत्र की जलवायु पहले आर्द्र थी, किन्तु कालान्तर में यहाँ शुष्कता बढ़ती गई तथा यह क्षेत्र एक शुष्क मरूस्थल बन गया। जैसलमेर के निकट आकल में **Wood Fossil Park** इसका प्रमाण है, जहाँ करोड़ों वर्षों पूर्व के विशाल वृक्षों के अवशेष मिट्टी में दबे हुए मिले हैं। भूगर्भशास्त्रियों का मत है कि यह क्षेत्र पहले एक बहुत ही उपजाऊ भाग था, जहाँ बड़ी-बड़ी नदियाँ बहती थीं। किन्तु भूगर्भिक हलचलों द्वारा इस क्षेत्र के ऊपर उठ जाने से इस क्षेत्र का जल प्रवाह गंगा या सिन्धु नदी में मिल गया तथा यहाँ शुष्कता बढ़ती गई। **ला टूश (La Touche)** नामक विद्वान ने पश्चिमी राजस्थान में बालू की उपलब्धि के विषय में बताया कि यह मिट्टी यहाँ प्रचलित दक्षिण पश्चिमी झंझावातों द्वारा लाई गई और पश्चिमी राजस्थान के अधिकांश भागों में जमा हो गई है। वैसे जलवायु की शुष्कता इस क्षेत्र को मरूस्थली रूप देने में सबसे प्रभावशाली कारक है।

भौगोलिक विशेषताएँ

यह मरूस्थल अरावली पर्वत के पश्चिम व उत्तर-पश्चिम में सिन्धु के मैदान तक विस्तृत है। भारत व पाकिस्तान के बीच अन्तर्राष्ट्रीय सीमा इसी क्षेत्र से होकर गुजरती है। थार का मरूस्थल एक निम्न भूमि का प्रदेश है। यह लगभग 150 से 380 मीटर तक ऊँचा, 640 किलोमीटर लम्बा व 160 किलोमीटर चौड़ा क्षेत्र है। यहाँ तेज हवाएं बालुका-स्तूपों एवं रेत के टीलों का निर्माण करती हैं। ये टीले स्थानान्तरित होते रहते हैं। कहीं-कहीं इन टीलों के बीच में निम्न भूमि मिलती है, जिसे **तल्ली** कहते हैं। वर्षा का जल भर जाने से ये तल्लियाँ अस्थायी झीलें बन जाती हैं,

जिन्हें **ढांढ** या **रन (Rann)** कहते हैं। यहाँ सांभर, लूणकरणसर, डीडवाना, पचपद्रा आदि खारे पानी की मुख्य झीलें हैं। इनमें नमक तैयार किया जाता है।

पवनों द्वारा बालुका स्तूपों के स्थानान्तरण एवं बालू के उड़ने से ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि थार का मरूस्थल प्रतिवर्ष एक किलोमीटर की गति से पूर्व की ओर बढ़ रहा है। इसके प्रसार को रोकने के लिये वृक्षों की पंक्तियाँ लगाई गई हैं, अर्द्ध मरूस्थली वनस्पति उगाई गई है एवं केन्द्रीय मरू क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (CAZRI) अन्य उपाय भी कर रहा है। इन्दिरा गांधी नहर के पूरा हो जाने पर इससे प्राप्त सिंचाई की सुविधा से इस मरूस्थल की काया पलट हो जायेगी। इस नहर का निर्माण कार्य इसी सम्भावना का लाभ उठाने के लिये पूर्णता की ओर धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है।

थार के मरूस्थल का महत्व

1. ग्रीष्म ऋतु में अत्यधिक गर्म हो जाने से यहाँ पर गहन निम्न दाब बन जाता है, जो दक्षिणी-पश्चिमी मानसून को तीव्रता से आकर्षित करता है।
2. यहाँ के कम वर्षा वाले क्षेत्रों के चारागाहों में पशुपालन महत्वपूर्ण व्यवसाय है।
3. यहाँ कई प्रकार के खनिज पाये जाते हैं। अभ्रक, जिप्सम, एसबैस्टोस, कोयला, तांबा, घीया पत्थर, संगमरमर, इमारती पत्थर, रॉक फॉस्फेट, फेल्सपार, खनिज तेल, प्राकृतिक गैस आदि मुख्य हैं।
4. मिट्टियाँ उपजाऊ होने के कारण, जल उपलब्ध हो जाने की स्थिति में कृषि विकास की सम्भावनाएं हैं।
5. भौतिक विविधता के कारण यह पर्यटक आकर्षण का क्षेत्र है। जैसलमेर में भरने वाला वार्षिक मरू मेला इसकी पुष्टि करता है।
6. पाकिस्तान के साथ सीमा पर स्थित होने के कारण इसका सुरक्षात्मक महत्व है।

4. दक्षिण का पठार (Deccan Plateau)

यह एक अति प्राचीन भूभाग है जो लगभग 16लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। यह भारत के विशाल मैदान के दक्षिण में फैला त्रिभुजाकार पठार है। इसके तीन ओर समुद्र (पूर्व में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अरब सागर व दक्षिण में हिन्द महासागर) है। इस त्रिभुजाकार पठार का आधार उत्तर में विंध्याचल पर्वतमाला तथा शीर्ष दक्षिण में कुमारी अन्तरीप है। दक्षिण-पूर्वी राजस्थान की उच्च भूमि से कन्याकुमारी तक इसकी अधिकतम लम्बाई 1800 किलोमीटर तथा अधिकतम चौड़ाई लगभग 1400 किलोमीटर है। इस पठार की औसत ऊंचाई समुद्रतल से 600 मीटर है। इसका विस्तार दक्षिण-पूर्वी राजस्थान, गुजरात, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु व केरल में आंशिक रूप से है। यह एक प्राचीन पठार है, जो अत्यन्त कठोर, पुरानी व रवेदार चट्टानों से बना है। इस पठार का ढाल पूर्व की ओर है। अतः नर्मदा व ताप्ती को छोड़कर सभी बड़ी नदियाँ पूर्व की ओर बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। इन नदियों ने इस पठार को कई भागों में विभक्त कर दिया है। यहाँ कई प्राचीन अवशिष्ट पर्वत श्रेणियाँ भी हैं (चित्र 4.8)।

दक्षिण के पठार की उत्पत्ति

यह पठार करोड़ों वर्ष पूर्व टिथिस सागर के दक्षिण में फैले हुए गौण्डवानालैण्ड का भाग था। कालान्तर में भूगर्भिक हलचलों के कारण इस महाद्वीप में दरारें पड़ गई और इसके खण्डित भागों ने एक दूसरे से अलग होकर वर्तमान दक्षिणी गोलार्द्ध के महाद्वीपों का रूप ले लिया। प्रायद्वीपीय भारत गौण्डवानालैण्ड से खण्डित होकर उत्तर पूर्व की ओर प्रवाहित होता-होता वर्तमान रूप में आया।

दक्षिण के पठार का वर्गीकरण

प्रायद्वीपीय भारत को निम्न प्रकार से उप-विभाजित किया जा सकता है -

1. पश्चिमी घाट - दक्षिण के पठार का पश्चिमी किनारा पश्चिमी घाट के रूप में ऊँचा उठा हुआ है, जिसे **सह्याद्रि (Sahayadri)** भी कहा जाता है। इनका अरब सागर की ओर ढाल तीव्र तथा पूर्व की ओर धीमा ढाल है। लगभग 1000 मीटर औसत ऊँचाई वाले सह्याद्रि का ताप्ती घाटी से कुमारी अन्तरीप तक क्रमिक विस्तार है। इसमें **भोर घाट, थाल घाट व पाल घाट** दर्रे हैं। दक्षिण में सह्याद्रि पूर्वी घाट से मिल गये हैं, जहाँ नीलगिरि पर्वत पर इसकी सबसे ऊँची चोटी दोदाबेटा (2637 मीटर) है। यहीं अन्नामलाई, इलायची व पालनी श्रेणियों का संगम है। निकट ही प्रसिद्ध पर्यटक स्थान उटकमण्ड, कोडाईकनाल आदि स्थित हैं। महाराष्ट्र में महाबलेश्वर (1438मीटर) भी पर्यटक महत्व का स्थान है। सह्याद्रि का उत्तरी भाग लावा से ढका है तथा दक्षिणी भाग नाइस, शिस्ट तथा चर्नोकाइट शैलों से निर्मित है। इससे निकलने वाली अधिकांश नदियाँ जैसे गोदावरी, भीमा, कृष्णा, तुंगभद्रा, पैनर, कावेरी, ताम्रपर्णी, पैरियार, वेगाई आदि पूर्व की ओर बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। जहाँ ये नदियाँ सह्याद्रि से पठार पर उतरती हैं, वहाँ जलप्रपात बनाती हैं। महाबलेश्वर के येना प्रपात (183 मीटर), कावेरी नदी का शिवसमुद्रम प्रपात (100 मीटर), ताम्रपर्णी नदी का पापनासम प्रपात मुख्य है। पश्चिम की ओर बहकर अरब सागर में गिरने वाली नदियाँ कम हैं, किन्तु वे भी जल प्रपात बनाती हैं। नर्मदा व ताप्ती के अतिरिक्त शरावती नदी का जिरसप्पा (श्री महात्मा गांधी) प्रपात (250 मीटर) मुख्य हैं। ये सभी प्रपात सस्ती जल-विद्युत उत्पादन के लिये अनुपम प्राकृतिक भेंट हैं।

2. पूर्वी घाट - ये घाट पूर्वी तट के समानान्तर लगभग 800 किलोमीटर की लम्बाई में फैले हैं। ये पश्चिमी घाट से भिन्न है, क्योंकि उनकी अपेक्षा

ये नीचे, तट से काफी दूर स्थित एवं अक्रमिक हैं। ये उत्तर में महानदी की घाटी से दक्षिण में नीलगिरि पर्वत तक फैले हैं। पूर्व की ओर बहने वाली सभी नदियों ने पूर्वी घाट को काफी छिन्न–विछिन्न कर दिया है। पूर्वी घाट की औसत ऊँचाई 600 मीटर है, किन्तु इसमें नीलगिरि 1516मीटर व महेन्द्र गिरि 1501 मीटर ऊँची चोटियाँ हैं। पूर्वी घाट के निर्माण में आग्नेय व अवसादी उत्पत्ति की शिस्ट, नीस, चर्नोकाइट, खौंडलाइट आदि शैलों का योगदान है।

3. दक्षिणी पठार – यह पठार अत्यन्त प्राचीन, कठोर एवं कायान्तरित आग्नेय शैलों, बलुआ पत्थर, चूने के पत्थर, कायान्तरित धारवाड़ शैलों एवं गोंडवाना शैलों (कोयला युक्त) से बना एक **प्राचीन पिण्ड** है। इसके काफी बड़े भाग पर ज्वालामुखी उद्गार से निकला लावा जम गया

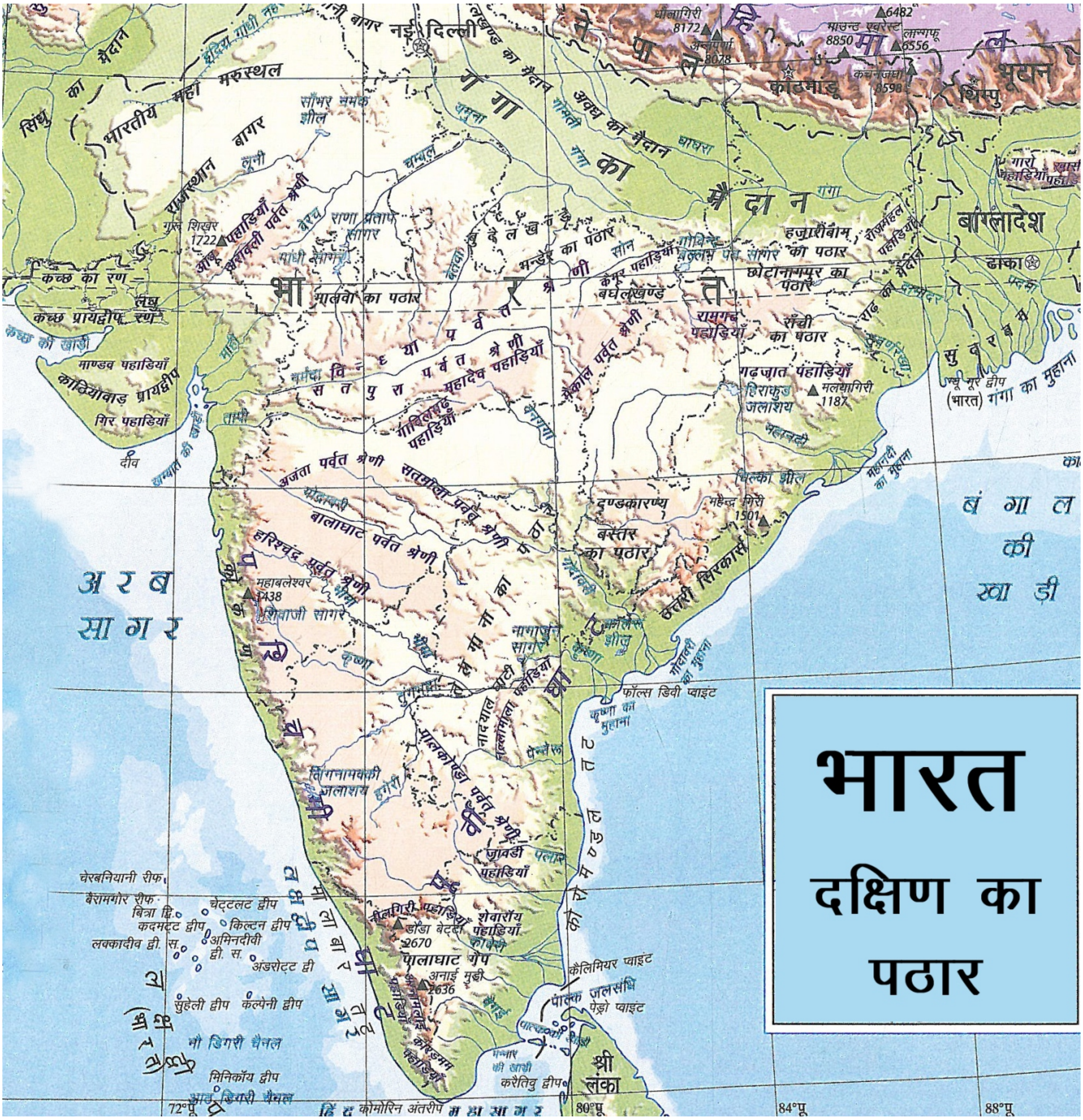

चित्र 4.8 – दक्षिण का पठार

था। इसी से विघटित उपजाऊ काली मिट्टी इस पठार के धरातल पर लगभग 5 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली है। यह मिट्टी दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान के कुछ भाग में, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश एवं कर्नाटक में पाई जाती है। इस पठार के कुछ भाग में विक्षालित (Leached) लाल लैटराइट मिट्टी भी मिलती है। इस पठार की औसत ऊँचाई 600 मीटर है। यह पठार पूर्व की ओर झुका हुआ (Tilted) है इसलिये इस पठार की अधिकांश नदियाँ पूर्व की ओर बहती हैं। इन नदियों ने इसे छोटे-छोटे पठारों में विभक्त कर दिया है, जैसे छत्तीसगढ़, मैसूर का पठार, रायल सीमा का पठार, तेलंगाना का पठार आदि। छत्तीसगढ़ उच्च पठारी भूमि से घिरा समतल प्रायः उच्च क्षेत्र है, जो समुद्रतल से 300 मीटर ऊँचा है। भूगर्भशास्त्रियों का मानना है कि शिलाँग का पठार इसी का सुदूर उत्तर-पूर्वी विस्तार है।

दक्षिण के पठार की उपयोगिता

1. गौण्डवानालैण्ड से सम्बन्धित प्राचीन कठोर पिण्ड होने के कारण यह एक स्थिर भूभाग है जो आकस्मिक भूगर्भिक घटनाओं जैसे भूकम्प, ज्वालामुखी आदि से सुरक्षित है।
2. समुद्र से घिरा होने के कारण यहाँ का जलवायु अधिक विषम नहीं होता।
3. यह क्षेत्र प्राचीन चट्टानों से बना होने के कारण खनिज पदार्थों में धनी है।
4. इसके उत्तरी-पश्चिमी भाग में उपजाऊ काली मिट्टी मिलती है। यह मिट्टी कपास व मूंगफली की कृषि के लिये सर्वाधिक उपयुक्त है।
5. लैटराइट मिट्टी वाले भागों में चाय, कहवा एवं रबर का उत्पादन होता है।
6. यहाँ साल, सागवान, शीशम तथा चन्दन के बहुमूल्य वन मिलते हैं।
7. यहाँ की नदियों के मार्ग में जल-प्रपात होने के कारण सस्ती जल-विद्युत उत्पादन के लिये प्राकृतिक परिस्थितियाँ हैं।
8. कठोर धरातल व पत्थर की आसान उपलब्धि के कारण यहाँ सड़क मार्गों का विकास अधिक हुआ है।
9. यहाँ कच्चा माल, शक्ति संसाधन, श्रम और बाजार आदि की सुविधाएँ उपलब्ध होने के कारण कई आधारभूत उद्योग जैसे - लौह इस्पात, एल्यूमीनियम, जलयान, शस्त्र उद्योग आदि विकसित हुए हैं।

5. समुद्र तटीय मैदान (Coastal Plains)

दक्षिण के पठार के दोनों तरफ तटीय मैदान स्थित हैं। इन दोनों तटीय मैदानों का निर्माण या तो तटवर्ती भागों के समुद्रतल से ऊपर उठ जाने या नदियों द्वारा मिट्टी के जमने से हुआ है। ये तटीय मैदान दो भागों में विभक्त किये जाते हैं -

(अ) पश्चिमी तटीय मैदान एवं (ब) पूर्वी तटीय मैदान।

(अ) पश्चिमी तटीय मैदान - ये मैदान खम्भात की खाड़ी से कुमारी अन्तरीप तक फैले हैं। इनकी औसत चौड़ाई 64 किलोमीटर है तथा अधिकतम ऊँचाई 180 मीटर है। यहाँ बहने वाली नदियाँ तीव्रगामी तथा छोटी हैं। इसलिए मिट्टी के जमाव का कार्य नहीं करती। दक्षिणी भाग में लम्बी तथा संकड़ी अनूप झीलें पाई जाती हैं। कोचीन बन्दरगाह ऐसी ही एक अनूप झील पर स्थित है। मुम्बई व मंगलौर इस तट के प्रमुख बन्दरगाह हैं। यह मैदान उत्तर में चौड़ा होकर नर्मदा-ताप्ती का मैदान बनाता हुआ गुजरात तक चला गया है। मैदान के **उत्तरी भाग को कोंकण** तथा **दक्षिणी भाग को मलाबार तट** कहते हैं। इस मैदान में उत्तम जलवायु, उपजाऊ मिट्टी, चावल की उपज, औद्योगिक विकास तथा व्यापार की सुविधाएँ होने के कारण सघन जनसंख्या पायी जाती है।

(ब) पूर्वी तटीय मैदान - यह पूर्वी घाट और बंगाल की खाड़ी के मध्य स्थित है। यह उत्तर में उड़ीसा से दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक फैला है। यह पश्चिम तटीय मैदान की अपेक्षा अधिक चौड़ा है। इसकी चौड़ाई 160 किलोमीटर से 480 किलोमीटर है। देशान्तरीय आधार पर यह मैदान दो भागों में बांटा जा सकता है - (1) निचला भाग जिसमें नदियों के डेल्टा हैं। महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियों ने पठार के ऊपरी भागों से कांप मिट्टी लाकर यहाँ बिछा दी है। समुद्र के निकटवर्ती भागों में बालू के ढेरों की लम्बी श्रृंखला मिलती है जो लहरों द्वारा बनाई गई है। इन ढेरों से घिरकर चिलका और पुलीकट छिछली झीलें बन गई हैं। ऐसी झीलों को **लैगून** कहते हैं। (2) ऊपरी भाग कांप मिट्टी के अवशिष्ट मैदान हैं जो अधिकांशतः नदियों की ऊपरी घाटियों में हैं। ये मैदान कहीं-कहीं नदियों द्वारा जमा की हुई उपजाऊ मिट्टी से ढके हैं तथा शेष भागों में पुरानी चट्टानें स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। इसके **उत्तरी भाग को उत्तरी सरकारी तट** और **दक्षिणी भाग को कारोमण्डल तट** कहा जाता है। चैन्नई व विशाखापट्टनम इस तट के प्रमुख बन्दरगाह है।

समुद्रतटीय मैदानों का महत्व

1. इन उपजाऊ मैदानों में चावल की खेती व्यापक रूप से की जाती है। तटों पर नारियल, काजू, सुपारी, रबर व ताड़ के बागात (Plantations) मिलते हैं।
2. मलाबार तट तथा पूर्वी नदियों के डेल्टाई क्षेत्रों में मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।
3. इन्हीं तटों पर देश के प्रमुख बन्दरगाह स्थित हैं, जिनसे आयात-निर्यात व्यापार किया जाता है।
4. इन तटों पर नमक बनाया जाता है।
5. पश्चिमी तट पर केरल में मोनोजाइट जैसा आणविक महत्व का बहुमूल्य खनिज मिलता है।
6. प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेने के लिये बड़ी संख्या में पर्यटक पणजी, वास्कोडिगामा, मडगांव, जूहू, चैन्नई, पुरी आदि के सामुद्रिक

तटों पर आते हैं।

6. द्वीप-समूह (Islands)

यद्यपि भारतीय तट अधिक कट-फटे नहीं हैं तथापि इनके निकट कई द्वीप पाये जाते हैं। स्थिति के अनुसार इन द्वीपों को दो भागों में विभाजित किया जाता है-

1. तटीय द्वीप (Coastal Islands) -

(अ) कांप मिट्टी के द्वीप (Alluvial Islands)- ऐसे द्वीप पूर्वी तट पर पाये जाते हैं। यहाँ चिल्का झील के निकट भासरा-मांडला द्वीप (पथरीला) को छोड़कर शेष सभी द्वीप कांप मिट्टी से निर्मित हैं। हुगली नदी के मुहाने पर सागर द्वीप, महानदी-ब्राह्मणी डेल्टा में शॉर्ट द्वीप तथा मुहाने पर ह्वीलर द्वीप, भारत-श्रीलंका के बीच 'रामसेतु' या आदम का पुल (Adam's Bridge), रामेश्वरम् का पाम्बन द्वीप, मन्नार की खाड़ी में क्रोकोडाइल, अंडा व कोटा द्वीप कांप मिट्टी से बने हैं।

(ब) पथरीले द्वीप (Rocky Islands)- ऐसे द्वीप अधिकांशतः पश्चिमी तट पर मिलते हैं। मुम्बई के निकट हैनरे, कैनरे, बुचर, ऐलीफैण्टा, पिजन द्वीप व काठियावाड़ तट पर पीरम, भैंसला आदि पथरीले द्वीप हैं।

2. दूरस्थ द्वीप (Distant Islands) -

इस वर्ग में वे द्वीप सम्मिलित हैं जो तट से काफी दूर स्थित हैं। संरचनात्मक दृष्टि से इन्हें भी दो उप-विभागों में बांटा जाता है -

(अ) पर्वतीय द्वीप (Hilly Islands)- इस वर्ग में वे द्वीप आते हैं जो डूबी हुई पर्वत श्रेणियों के समुद्रतल से ऊपर उठे हुए भागों से बने हैं। बंगाल की खाड़ी में स्थित अण्डमान निकोबार द्वीप समूह इसके उदाहरण हैं। अराकान योमा नामक श्रेणी म्यांमार (बर्मा) के दक्षिण में बंगाल की खाड़ी में डूब गई है। इसके जो ऊँचे भाग समुद्रतल से ऊपर रह गये हैं, उनसे ही अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह बने हैं। इनमें से कुछ द्वीपों की उत्पत्ति ज्वालामुखी उद्गारों के कारण हुई है। इस समूह में लगभग 200 छोटे-बड़े द्वीप सम्मिलित हैं, जो 350 किलोमीटर की दूरी तक फैले हैं। अण्डमान द्वीप समूह दस डिग्री जलमार्ग (Ten Degree Channel) द्वारा निकोबार द्वीप समूह से अलग हुए हैं।

(ब) प्रवाल द्वीप (Coral Islands)- अरब सागर में केरल के तट से पश्चिम की ओर स्थित लक्षद्वीप ऐसे ही द्वीप हैं। लगभग 21 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले इस समूह में लक्षद्वीप, अमीनदीवी, मिनीकॉय, कवरत्ती, इलायची द्वीप आदि सम्मिलित हैं। ये सभी प्रवाल द्वीप हैं जो अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण पर्यटक आकर्षण के केन्द्र हैं।

द्वीपों का महत्व

1. सागरों से घिरा होने के कारण यहाँ की जलवायु सम रहती है।
2. अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण द्वीप पर्यटक आकर्षण के केन्द्र होते हैं।
3. मुख्य भू-भाग से अलग होने के कारण यहाँ जैविक विशिष्टता रहती है।
4. व्यापारिक जलयानों को ईंधन, संक्षिप्त विश्राम व संकटकालीन स्थिति में शरण देने में इनका विशेष योगदान रहता है।
5. हिन्द महासागर में विशिष्ट स्थिति के कारण इनका सुरक्षात्मक महत्त्व है। कुछ विदेशी ताकतों द्वारा हिन्द महासागर में अपना प्रभाव बढ़ाने के सन्दर्भ में इनका नौसैनिक महत्त्व और भी बढ़ गया है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. भारत में शैल संरचना आद्य कल्प, पुराण कल्प, द्रविड़ कल्प तथा आर्य कल्प में विभाजित।
2. उच्चावच व स्थलाकृतिक प्रदेशों की अनेक भिन्नताएँ - उत्तरी पर्वतीय प्रदेश, विशाल मैदान, थार का मरूस्थल, दक्षिण का पठार, तटीय मैदान व द्वीप समूह।
3. उत्तरी पर्वतीय प्रदेश - पांच लाख वर्ग कि.मी. क्षेत्र में विस्तृत, 2400 किलोमीटर लम्बा तथा 250 से 400 किलोमीटर चौड़ा है।
4. हिमालय का भौगोलिक वर्गीकरण - महा हिमालय, लघु हिमालय व उप हिमालय ।प्रादेशिक वर्गीकरण - हिमाचल, कुमाऊँ, नेपाल व असम हिमालय।
5. हिमालय के अनेक लाभ।
6. विशाल मैदान - सतलज-गंगा-ब्रह्मपुत्र का मैदान; इस धनुषाकार मैदान की लम्बाई लगभग 2400 किलोमीटर व चौड़ाई 150 से 480 किलोमीटर तक है। भौगोलिक वर्गीकरण - भाबर, तराई, बांगर व खादर प्रदेश। प्रादेशिक वर्गीकरण - पंजाब-हरियाणा मैदान, गंगा व ब्रह्मपुत्र का मैदान तथा गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा; विशाल मैदान का महत्व।
7. थार का मरूस्थल - विशाल शुष्क बालुका स्तूप से ढका मरूस्थल; शुष्कता के परिप्रेक्ष्य में इन्दिरा गांधी नहर का विशेष महत्व; थार के मरूस्थल का महत्व।
8. दक्षिण का पठार - लगभग 16लाख वर्ग किलोमीटर में विस्तृत 1800 किलोमीटर लम्बा तथा अधिकतम 1400 किलोमीटर चौड़ा विश्व के प्राचीनतम पठारों में से एक। (अ) मध्यवर्ती अग्रभूमि - अरावली श्रेणी, पूर्वी राजस्थान की उच्च भूमि, मालवा का पठार, बुन्देलखण्ड का पठार, बाघेलखण्ड का पठार, छोटा नागपुर का पठार, विन्ध्याचल-सतपुड़ा श्रेणियाँ। (ब) प्रायद्वीपीय पठार -

पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, दक्षिणी पठार। दक्षिण के पठार की उपयोगिताएँ।

9. समुद्र तटीय मैदान – पश्चिमी तटीय मैदान अपेक्षाकृत संकड़े, उत्तरी भाग कोंकण व दक्षिणी भाग मलाबार तट। पूर्वी तटीय मैदान – चौड़े व क्रमिक, उत्तरी भाग उत्तरी सरकार व दक्षिणी भाग कारोमण्डल तट। तटीय मैदानों का महत्व।
10. द्वीप समूह – तटीय द्वीप – कांप मिट्टी के द्वीप व पथरीले द्वीप। दूरस्थ द्वीप – पर्वतीय व प्रवाल द्वीप।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. सतलज व काली नदियों के बीच जो भूआकृतिक भाग विस्तृत है, वह है –
   (अ) हिमाचल हिमालय (ब) उप हिमालय
   (स) कुमाऊँ हिमालय (द) नेपाल हिमालय।
2. ह्वीलर द्वीप हैं –
   (अ) दूरस्थ द्वीप (ब) कांप मिट्टी के द्वीप
   (स) पर्वतीय द्वीप (द) प्रवाल द्वीप।
3. जहाँ मिट्टी का प्रतिवर्ष प्राकृतिक नवीनीकरण होता रहता है, वह है–
   (अ) भाबर प्रदेश (ब) तराई प्रदेश
   (स) बांगर प्रदेश (द) खादर प्रदेश।

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

4. तल्ली किसे कहते हैं?
5. मर्ग कहाँ मिलते हैं?
6. कोंकण तट किसे कहते हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. ढांढ व तल्ली में क्या अन्तर है?
8. पूर्वी व पश्चिमी घाट में क्या अन्तर है?
9. भारत के पथरीले द्वीप कौनसे हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न –

10. भारत को स्थलाकृतिक प्रदेशों में विभक्त करते हुए हिमालय प्रदेश का विस्तृत वर्णन कीजिए।
11. भारत को स्थलाकृतिक प्रदेशों में विभक्त करते हुए विशाल मैदान का विस्तृत वर्णन कीजिए।
12. भारत को स्थलाकृतिक प्रदेशों में विभक्त करते हुए दक्षिण के पठार का विस्तृत वर्णन कीजिए।

आंकिक प्रश्न –

13. भारत के रूपरेखा मानचित्र में प्रमुख भूआकृतिक विभाग दर्शाइये।
14. दक्षिण के पठार के उपविभागों को रेखाचित्र द्वारा दर्शाइये।

उत्तरमाला – 1. स 2. ब 3. द